संपादकीय

हमारे समाज में नियंत्रण से बाहर होती कानून और व्यवस्था की स्थिति जनता में असुरक्षा और भय की मनःस्थिति रच रही है। यह मनःस्थिति कैरियर की दौड़ में पिछड़ जाने के भय और व्यक्तिगत सुरक्षा से जुड़ी हुई है। इसका दोहन करने के लिए बाजार की ताकतें सामने आ रही हैं। कैरियर के नाम पर एक तरफ कोचिंग सेन्टर्स का कारोबार तेजी से बढ़ रहा है तो दूसरी तरफ ऐसे स्कूल सामने आ रहे हैं जो व्यक्तिगत सुरक्षा के नाम पर अपना व्यवसाय चमका रहे हैं।

हमारे देश में लड़कियों के साथ आए दिन होने वाली छेड़खानी और बलात्कार जैसी घटनाओं ने असुरक्षा और भय के सामाजिक माहौल को और अधिक गहराया है। इस असुरक्षा के सामाजिक मनोविज्ञान का फायदा उठाने के लिए बाजार तैयार है। शिक्षा इंसान की बुनियादी जरूरत है। सरकारी शिक्षा व्यवस्था में जवाबदेही के अभाव ने निजी क्षेत्र को शिक्षा में अपने पैर पसारने के अवसर प्रदान किए हैं। शहरी क्षेत्र में निजी स्कूलों ने समाज के एक वर्ग को अपनी ओर आकर्षित किया है। कस्बाई और ग्रामीण इलाकों में भी इनके दोयम दर्जे के संस्करण तेजी से पनप रहे हैं। मध्यम वर्ग बाजार की तर्ज पर ऐसे स्कूलों की सेवा खरीदने के लिए तैयार है। लेकिन आज के सामाजिक माहौल ने जो असुरक्षा और भय की मनःस्थिति निर्मित की है क्या उसका अंत कहीं संभव है? क्या इससे बचने के उपाय व्यक्तिगत स्तर पर किए जा सकते हैं?

इस सामाजिक माहौल का ज्यादा से ज्यादा फायदा कमाने के लिए कुछ स्कूलों ने नए रास्ते खोज लिए हैं। इसका एक उदाहरण हाल ही में रेडियो विज्ञापन के रूप में सुनने को मिला। विज्ञापन का सार इस प्रकार है- एक बालिका के माता-पिता अपनी बड़ी होती बेटी की शिक्षा को लेकर चिंतित हैं। मां कहती है, ''हमारी बेटी बड़ी हो रही है। मैं हर किसी पर विश्वास नहीं कर सकती।'' पिता कहते हैं, ''अरे! मैं ऐसे स्कूल का फार्म लेकर आया हूं जहां शिक्षकों से लेकर कैंटीन और गार्ड तक, पूरा स्टाफ महिलाओं का है।'' मां फिर पूछती है, ''हमारी बेटी स्कूल भी तो जाएगी तो क्या रास्ते के लिए भी महिला ड्राइवर और कंडेक्टर हैं?'' पिता आश्वस्त करते हैं कि बस की ड्राइवर और कंडेक्टर भी प्रशिक्षित महिला हैं। यह विज्ञापन सिर्फ और सिर्फ लड़कियों के लिए खोले गए एक निजी 'इन्टरनेशनल' स्कूल का है और यह इस तरह बालिकाओं की सुरक्षा की गारंटी दे रहा है।

आज के सामाजिक परिदृश्य में किसी भी माता-पिता के लिए अपनी बेटी की सुरक्षा का यह उचित सरोकार है लेकिन समस्या यह है कि क्या सुरक्षा के सवाल सिर्फ किसी एक ही वर्ग से जुड़े हुए हैं? क्या यह सुरक्षा सिर्फ स्कूल की चारदीवारी तक ही सीमित है? क्या यह सरोकार सिर्फ लड़कियों तक ही सीमित है और क्या लड़के असुरक्षा का शिकार नहीं होते? क्या लड़कियों की शिक्षा को लड़कों से अलग-थलग कर देने से लड़की और लड़कों का फायदा होगा? ये कुछ सवाल हैं। हालांकि इन सवालों के जवाब आसान नहीं हैं।

यह बात स्पष्ट रूप से कही जा सकती है कि इस तरह के निजी स्कूल माता-पिता की चिन्ताओं का इस्तेमाल अपने लाभ के लिए कर रहे हैं। हमारे समाज में एक ऐसा वर्ग है जो दौलत के बल पर अपने लिए अलग व्यवस्थाएं करने में सक्षम है। लेकिन इसकी दिक्कत यह है कि ये सामाजिक बदलाव के प्रयासों की गति को धीमा करते हैं क्योंकि वह वर्ग सामाजिक बदलाव के प्रयासों में सक्रिय नहीं रहता। इसके साथ ही एक सवाल यह है कि उस बहुसंख्यक वर्ग की लड़कियों की सुरक्षा का क्या होगा जो अपने लिए ऐसी शिक्षा नहीं खरीद सकता? दूसरी समस्या यह है कि असुरक्षा या सामाजिक-सांस्कृतिक कारणों के नाम पर सह-शिक्षा के बजाय लड़के और लड़कियों के अलग-अलग स्कूल खोलना कितना उचित है? हमारे समाज में एक वक्त यह पुरजोर पैरवी की गई थी कि लड़कियों के लिए अलग स्कूल होने चाहिए। उस वक्त लड़कियों का नामांकन बढ़ाना एक चुनौती थी जो एक हद तक अभी भी है। लेकिन निजी स्कूलों का मंतव्य यह नहीं है। वे असुरक्षा के सामाजिक मनोविज्ञान का फायदा उठाना चाहते हैं। इन प्रयासों से असुरक्षा की मनःस्थिति से निजात तो नहीं ही मिलेगी। हमें लगता है कि लड़कियों की शिक्षा और उनकी सुरक्षा एक सामाजिक सरोकार है, उसका उपचार भी सामाजिक स्तर पर ही संभव है। यह किसी वर्ग विशेष की समस्या नहीं है। यह हमारे साझा सामाजिक जीवन की समस्या है और इसके समाधान भी हम सब को मिलकर निकालने होंगे। ◆